डाउन टू अर्थ

पुस्तक समीक्षा: छूटे हुए इतिहास से साक्षात्कार

यह किताब सबसे कम संसाधन वालों द्वारा सबसे लंबे समय तक चली लड़ाई का मौखिक दस्तावेज है

By Anil Ashwani Sharma
On: Friday 07 October 2022

अगली खबर ›

इलस्ट्रेशन: योगेन्द्र आनंद / सीएसई

भारत में बीसवीं सदी के सत्तर के दशक का अंत ऐसे जनसंघर्ष की शुरुआत से हुआ, जिसने खास भौगोलिक क्षेत्र में जनअधिकारों की लड़ाई शुरू कर उसे वैश्विक विमर्श में तब्दील किया। एक ऐसी लड़ाई, जिसने आजादी के बाद की पूरी राजनीतिक व सामाजिक उपलब्धियों को परखने, उन पर सवाल करने और इस देश में हाशिए पर खड़े लोगों के लिए भूगोल के अंदर अपने राजनीतिक व सामाजिक अधिकार के सवालों को सिखाने का स्कूल तैयार किया।

सबसे कम संसाधन वाले लोगों त्कारा सबसे लंबे समय तक चली इस लड़ाई के मौखिक इतिहास क

दस्तावेजीकरण है नंदिनी ओझा की किताब “द स्ट्रगल फॉर नर्मदा”। सामाजिक कार्यकर्ता, शोधकर्ता व इतिहासकार नंदिनी ओझा नर्मदा बचाओ आंदोलन की कार्यकर्ता रही हैं।

आंदोलन की बुनियाद में कौन लोग थे, इसमें गैर सरकारी संगठन और जन आंदोलनों की क्या भूमिका थी को सिलसिलेवार तरीके से रखने के लिए नंदिनी ओझा ने मौखिक इतिहास का सहारा लेकर मराठी में “लढा नर्मदेचा” (नर्मदा के लिए संघर्ष) किताब लिखी।

इस किताब में दो आदिवासी नेताओं केशवभाऊ वसावे और केवलसिंग वसावे की स्मृति के जरिए ओझा ने नर्मदा घाटी से उठे जनांदोलन का आख्यान रच डाला है। “लढा नर्मदेचा” 2017 में प्रकाशित हुई थी, जिसका अंग्रेजी में अनुवाद “द स्ट्रगल फॉर नर्मदा” है।

मानव के विकास के नाम पर किस तरह खास वर्ग के मानवाधिकारों का उल्लंघन हुआ। नंदिनी ने दो आदिवासी नेताओं की जीवनी से उसे किताब के पन्नों पर जीवंत किया है। जो आदिवासी समुदाय पुरखों से नर्मदा घाटी की जमीन और जंगलों में अपना जीवन जी रहे थे उनकी पूरी पारिस्थितिकी को कृत्रिम बांध के जरिए डुबो दिया गया।

केशवभाऊ वसावे और केवलसिंग वसावे के जरिए ओझा बताती हैं कि लोगों को सुनने के बाद ही समझ आता है कि क्या याद रखा जाए और किस चीज को छोड़ कर आगे बढ़ा जाए।

त्काकृतिक आत्मनिर्भरता से भरे एक आदर्श अतीत व चंद लोगों तक सिमटे आज केविकास केबीच का निरंतर संवाद इस तरह छापेखाने से निकल पाया है तो उसकेपीछे नंदिनी ओझा केडेढ़ दशक से त्कादा का अनुभव है।

नंदिनी नर्मदा बचाओ आंदोलन की सिक्रय कार्यकर्ता रहने केबाद बाहर निकल कर जब उसकेत्कभाव, इतिहास और वर्तमान को रेखांकित करती हैं तो समझ में आती है कि इतिहास को कहने वाले और उसे लिखने वाले का अंतर अनुशासनात्मक संबंध का उस पर किस तरह का असर पड़ता है। किताब की शुरुआत में एक-दूसरे की सीमाओं को छूते हुए तीन रात्क गुजरात, मत्क त्कदेश और महारात्क्र का नक्शा है।

किसी भी भूगोल का नक्शा कैसा होगा यह वहां की राजनीति निर्धारित करती है। किताब की भूमिका में नंदिनी ओझा एक लोककथा का जिक्र करती हैं, त्कारवहीं सदी में सोलंकी राजवंश की रानी मिनलदेवी मालव तालाब का िनर्माण करने जा रही थीं। एक बुजुर्ग मिहला ने आकर रानी से निवेदन किया कि वे तालाब का नक्शा बदल दें ताकि उसकी झोपड़ी बच जाए। रानी ने बुजुर्ग मिहला की बात मान ली।

त्कस्तावित वृत्काकार तालाब की सौंदर्यात्मक भत्कता केसाथ इसिलए समझौता कर लिया गया ताकि एक घर बच जाए।

ऐसी लोककथाओं के बीच बड़ी हुई नंदिनी बचपन की कहावतों को याद करती हैं कि तुम भले ही घी बर्बाद कर दो लेकिन पानी की एक बूंद भी बर्बाद नहीं करो। वहीं, ऐसे लोक समाज में राजतंत्र कह रहा था कि सरदार सरोवर बांध बनते ही पानी की सारी समस्या खत्म हो जाएगी और लोग नंदनवन जैसे स्वर्ग में रहने का अनुभव करेंगे।

इस स्वर्ग की कीमत बस इतनी सी मांगी जा रही थी कि गुजरात, महाराष्ट्र और मध्यप्रदेश के 245 गांव जलमग्न हो जाएंगे, उनका अस्तित्व खत्म हो जाएगा। गुजरात के सूखाग्रस्त इलाके का विकास नर्मदा किनारे रह रहे लोगों के विनाश से लिखा गया। नंदिनी ओझा आगे चल कर यह भी समझ पाती हैं कि सरदार सरोवर परियोजना गुजरात के सूखाग्रस्त इलाकों का हल है ही नहीं।

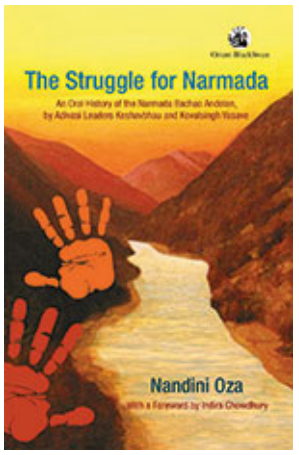

इसके जरिए पहले से ही आर्थिक व राजनीतिक रूप से मजबूत सेंट्रल गुजरात को ही और मजबूत होना था। जिस परियोजना में विश्व बैंक तक का पैसा लग रहा है उसके बारे में आदिवासियों को तब पता चलता है जब उन्हें डुबाने का वक्त आ चुका होता है।

नंदिनी ओझा के सवाल पर केशवभाऊ बताते हैं, “सरपंच ने हमसे सवाल पूछने शुरू कर दिए। क्या तुम लोगों को पता है कि गुजरात में सरदार सरोवर बांध बन रहा है। हम यह नहीं जानते कि यह कब तक बनेगा, पर हम यह जान चुके हैं कि ऐसा बांध बन रहा है।

सरपंच ने एलान कर दिया कि हमारा सब कुछ भी डूबेगा और हमें गुजरात के परवेटा में जमीन मिलेगी। और हम कहते-नहीं साहब, हम लोग पुराने समय से महाराष्ट्र के नागरिक हैं। आप हमें महाराष्ट्र के बाहर क्यों भेज रहे हैं?...हम महाराष्ट्र नहीं छोड़ेंगे साहब।”

सरकार के कारिंदे आदिवासियों को समझा रहे थे कि मध्य प्रदेश, गुजरात और महाराष्ट्र भारत देश का हिस्सा है और उन्हें देश से बाहर नहीं भेजा जा रहा है। केशुभाउ अपनी समझ के साथ आदिवासियों की देश और सरकार के संबंध की व्याख्या करते हैं, सरकार कह रही है कि वह हमें गुजरात में जमीन देगी। लेकिन सरकार भरोसेमंद नहीं है।

नर्मदा बचाओ आंदोलन की रीढ़ की हड्डी नर्मदा किनारे बसे आदिवासी रहे जिन्होंने डूबेंगे पर हटेंगे नहीं का नारा लगा कर आंदोलन शुरू किया। औपनिवेशिक काल से ही भारत की जमीन ने अहिंसक आंदोलन की जो सीख ली नर्मदा बचाओ आंदोलन उसका सबसे तेजस्वी रूप है।

चार दशक से चल रहे आंदोलन के इस इतिहास में वह भूदान आंदोलन भी आता है जिसने पूरब से लेकर पश्चिम और उत्तर से लेकर दक्षिण तक के भारत को सामाजिक व राजनीतिक रूप से प्रभावित किया। आज भी आंदोलनों के मुख्यधारा के साहित्य में भूदान आंदोलन से लेकर नर्मदा बचाओ आंदोलन भी अपने हिस्से की कविता, कहानी, उपन्यास, संस्मरण और इतिहास की मांग कर रहा है।

आज जिस तरह से दलित साहित्य और आत्मकथाएं प्रचुर मात्रा में सामने आई हैं उस तरह से आधुनिक भारत

में आदिवासी समाज के संघर्ष का आख्यान आना अभी बाकी है। नंदिनी ओझा की किताब “द स्ट्रगल फॉर नर्मदा ” एक ऐतिहासिक जरूरत को पूरा करती है। आजादी के बाद सबसे लंबे चले इस अहिंसक आंदोलन के नायक वे आदिवासी हैं जो विकास की हर परिभाषा में नकारे गए हैं। विकास की हर राह इनके घरों को रौंदती हुई गुजरती है। विकास के विरोधाभास को लेकर शुरू हुए संघर्ष की यह मौखिक दास्तान लोक व तंत्र के बीच बनी बड़ी खाई को दिखाने का काम करती है।

“हक हथियाने का हथियार हैं बड़े बांध”

किताब की लेखिका नंदनी ओझाा से डाउन टू अर्थ की बातचीत

आपकी किताब में कहा गया है कि सुनना भी एक रचनात्मक राजनीतिक प्रक्रिया हो सकती है। स्मृति और राजनीति के संबंध को आप किस तरह देखती हैं?

किसकी और कैसी स्मृतियों को संयोजित, संरक्षित, प्रसारित व आरोपित किया जाता है, यह अपने-आप में राजनीति है।

आदिवासी नेता केशवलिंग के घर को नर्मदा के बाढ़ का पानी डुबो देता है फिर भी वे नर्मदा नदी की पूजा करते हैं। केशवलिंग कहते हैं कि वह नर्मदा से अपने रिश्ते को अच्छी तरह से परिभाषित नहीं कर सकते हैं। नर्मदा पर बांध व जनजातीय समूहों के मानवाधिकार हनन को आप किस तरह से परिभाषित करेंगी?

मेरा मानना है कि बड़े बांधों के जरिए समाज का शक्तिशाली वर्ग अपने फायदे के लिए विकास के नाम पर हाशिए पर खड़े लोगों के संसाधनों को हथिया लेता है। मैं बिना किसी हिचक के बड़े बांधों को वह हथियार कहूंगी जिससे सत्ता में बैठे लोगों के फायदे के लिए आदिवासियों से जल, जंगल, जमीन, पानी और अन्य मूल्यवान संसाधन छीन लिए जाते हैं।

आप बारह साल तक नर्मदा बचाओ आंदोलन की सक्रिय कार्यकर्ता रही हैं। अपनी किताब में आप आदिवासी नेता केशवलिंग वासव से एक सवाल पूछती हैं। वही सवाल मैं आपसे दुहराता हूं। क्या आप अपनी आने वाली पीढ़ी को अपने जैसा कार्यकर्ता बनने की सलाह देंगी?

बिलकुल। मैं हर युवा व्यक्ति से अपील करती हूं कि पर्यावरण की रक्षा, सामाजिक व आर्थिक न्याय, बराबरी और सतत विकास के लिए वह अपनी जिंदगी के कुछ साल सही सरोकारों से जुड़ी सार्वजनिक सक्रियता को जरूर दें।